03122015-ls-ngp-04.qxd 12/03/2015 1:20 PM Page 1

और... एक शेर

महानगर का सभ्य जगत, यह जंगल अजब निराला है
धन सत्ता के बल पर बकरी भी शेरों को खाती है
-विरंजीत

लोकमत समाचार
नागपुर, गुरुवार, 3 दिसंबर 2015

लोकमत समाचार

तमसो मा ज्योतिर्गमय

{ अपने मित्र को उसके दोषों को बताना मित्रता की सबसे कठोर परीक्षा होती है. ■ हेनरी वार्ड बीचर }

संपादकीय

जनता के सामने आदर्श पेश करें जनप्रतिनिधि

जिसके घर में शौचालय नहीं है उसे राज्य में स्थानीय निकाय का कोई भी चुनाव लड़ने से रोकने का महाराष्ट्र सरकार का फैसला सराहनीय है. हालांकि राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों के स्थानीय निकायों के लिए इस तरह का नियम पहले से ही लागू है और वर्तमान फैसले के अंतर्गत मुंबई महानगरपालिका अधिनियम 1988, महाराष्ट्र महानगरपालिका अधिनियम और महाराष्ट्र नगर परिषद, नगर पंचायत तथा औद्योगिक नगरी अधिनियम 1965 में प्रावधान किया जाएगा. वैसे तो शहरी क्षेत्रों के अधिकांश घरों में शौचालय होते हैं, लेकिन इस फैसले से उम्मीद है कि आम लोगों में स्वच्छता के प्रति जागरूकता और बढ़ेगी. हकीकत तो यह है कि जनप्रतिनिधि चाहे वह छोटा हो या बड़ा, समाज का आदर्श नागरिक होना चाहिए, जो लोगों के लिए मिसाल बने, अपने कार्यों से उनमें प्रेरणा जगा सके. जिस तरह शौचालय संबंधी फैसले से राज्य सरकार ने स्वच्छता अभियान को गति देने का प्रयास किया है, उसी तरह जनप्रतिनिधि बनने के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित करके सरकार शिक्षा के क्षेत्र में भी व्यापक जागरूकता पैदा कर सकती है. जब हर तरह के काम के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यताएं निर्धारित हैं तो जनप्रतिनिधि के लिए क्यों नहीं होनी चाहिए, जब तक जनप्रतिनिधि के पास निर्धारित शैक्षिक योग्यता नहीं रहेगी वह समाज को दिशा कैसे दिखा सकेगा? जब देश आजाद हुआ उस दौर की बात दूसरी थी. अंग्रेजों के राज में लोगों को शिक्षा का सही वातावरण नहीं मिल पाया था और कई बड़े नेता भी समुचित शिक्षा हासिल नहीं कर सके थे, जबकि जनसमाज पर उनकी व्यापक पकड़ थी. शायद उसी समय से यह धारणा बन गई कि जनप्रतिनिधि बनने के लिए उच्चशिक्षित होने की आवश्यकता नहीं है. लेकिन अब समय बदल गया है. आधुनिकता के इस युग में तकनीकी ज्ञान में महारत हासिल किए बिना समाज को विकास के पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना संभव नहीं है. अगर जनता से हम यह अपेक्षा करते हैं कि वह उच्च शिक्षित बने तो जाहिर है कि इसकी शुरुआत उसकी अगुवाई करने वाले नेताओं से ही होनी चाहिए. इसलिए जनप्रतिनिधि बनने के इच्छुकों के लिए घर में शौचालय होना बाध्यकारी करने के महाराष्ट्र सरकार के फैसले को इस रूप में देखा जाना चाहिए कि एक आदर्श नागरिक के भीतर जो-जो योग्यताएं होनी चाहिए, नेतागण उसे पहले खुद हासिल करें. तभी वे दूसरों को इसके लिए प्रेरित कर पाएंगे और एक आदर्श समाज का निर्माण हो सकेगा. ■■

परिचय

जब से उसका स्थानांतरण आदेश आया है सब मन ही मन खूब पुलकित हैं. खूबचंद चपरासी से लेकर बड़े बाबू खेमराज तक सब. कैसी होगी वह? युवा, अधेड़ या वृद्ध? फैशनेबल या सीधी-सादी? दिलफेंक या गुमसुम? खूबसूरत या कमसूरत? कौन बनेगा उसका खासमखास? बड़े बाबू या बॉस? तरह-तरह की अटकलें. लोग बार-बार स्थानांतरण आदेश देखते गोया उसकी उम्र लिखी हो या सूरत दिखती हो या सीरत का अंदाजा होता हो. आदेश को सूंघते और मुस्कुराते मानो कोई अनाम खुशबू उनके नथुनों में बस गई हो.

लघुकथा

माधव नागदा

आखिर वह दिन भी आ गया जब उसने ज्वाइन किया. सभी ने उसमें अपनी-अपनी कल्पना का कोई न कोई रंग खिलते पाया. वह कमसिन नहीं तो अधेड़ भी नहीं थी. हंसोड़ तो नहीं किंतु विनोदी स्वभाव की थी. फैशनेबल होते हुए भी फूहड़ नहीं थी. रंग गेहुंआ. आंखों में सबके प्रति एक आत्मीय भाव. सभी उसका परिचय पाने को उतावले हो उठे. सो एक परिचय पार्टी ही रख दी गई. औपचारिक परिचय के पश्चात लोगों ने उससे तरह-तरह के सवाल पूछना शुरू किया. कितने साल की सर्विस हो गई है? इसके पहले कहां-कहां रही? शिक्षा कहां तक? विषय क्या-क्या? रुचियां, पसंद, नापसंद वगैरह-वगैरह. एक होड़-सी. उसने सबको यथायोग्य विनम्रता से जवाब दिया. फिर भी लोगों की उत्सुकता निःशेष नहीं हो पा रही थी. वर्मा ने पूछा, ''आपके हसबैन्ड का क्या नाम है?''

''मिस्टर कमल.'' उसने बेरुखी से उत्तर दिया.

''आपके हसबैन्ड क्या करते हैं?''

उसने कोई ध्यान नहीं दिया. शायद जानबूझकर.

''आपके हसबैन्ड कहां हैं आजकल?''

वह उखड़ गई. ''क्या मतलब है? मेरे हसबैन्ड से क्या लेना है आपको?'' उसकी आवाज रुंध-सी गई. ''क्या मैंने आप लोगों की वाइफ के बारे में कोई सवाल पूछा है....?'' आगे वह कुछ नहीं बोल सकी और उठकर तीर की तरह बाहर निकल गई. ■■

डगमगाती नाव में लोकपाल

आलोक मेहता
वरिष्ठ पत्रकार

दुनिया के लोकतांत्रिक इतिहास में एक कानून बनाने और लागू करने के लिए भारत जैसा रिकार्ड नहीं मिल सकेगा. दिलचस्प, अद्‌भुत, आदर्श नमूना. सड़क से संसद तक हजारों भाषण, नारे, आंदोलन, जेल, बधाई की फूलमालाएं, जय-जयकार, चुनाव का मुद्दा और जय-पराजय की पताकाएं. फिर भी इस कानून की डगमगाती नाव राष्ट्रीय स्तर पर गुणवान शक्तिसंपन्न एक लोकपाल को किनारे पहुंचाकर सम्मान के साथ आसन नहीं दिला पाई. 1963 से 2013 तक संसद के गलियारों की खींचतान के बाद दोनों सदनों में लोकपाल विधेयक पारित हो गया. दिसंबर 2015 में धूमधाम के साथ देश वर्षगांठ मना सकता है. लेकिन माला खाली कुर्सी को ही पहनाई जा सकती है. लोकपाल के चयन मात्र की छोटी सी कमेटी के प्रावधान का संशोधन प्रस्ताव अभी स्वीकृत होना है. दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र का दावा करने वाले हमारे महान कानून निर्माता जनप्रतिनिधि सफलताओं-विफलताओं पर घंटों तक भाषण दे सकते हैं, लेकिन एक लोकपाल चुनने के मुद्दे पर गहरे समुद्र से मोती निकालने की तरह महीनों गोताखोरी करते रहे हैं.

विडंबना देखिए 1968 में लोकपाल के लिए संसद में विधेयक का प्रस्ताव लाने वाले शांति भूषण परिवार की अगली पीढ़ी के विधिवेत्ता प्रशांत भूषण अपनी ही बनाई आम आदमी पार्टी के निष्कासित सहयोगी योगेंद्र यादव के साथ केवल डेढ़ करोड़ की आबादी वाले केंद्रशासित दिल्ली राज्य में उपयुक्त लोकपाल बनाए जाने के लिए फिर सड़क पर आंदोलन कर रहे हैं. इतने वर्षों के संघर्ष के बाद तो कई अफ्रीकी देशों में संपूर्ण स्वतंत्रता के साथ नए संविधान बनकर तरक्की भी होती रही है. शांति भूषण परिवार अकेला नहीं है. 1963 में सबसे पहले डॉ.लक्ष्मीमल सिंघवी ने कांग्रेस में रहते 'लोकपाल' के गठन का प्रस्ताव संसद में रखा था. लगभग 52 वर्ष बाद उनके सुपुत्र अभिषेक सिंघवी लोकपाल की नियुक्ति को लेकर कांग्रेस पार्टी, संसद और टीवी चैनलों में बहस करते दिखाई देते हैं. संसद के गलियारों में एक वयोवृद्ध पूर्व सांसद मुस्कराते हुए सवाल करते हैं- 'लोकपाल को कुर्सी पर बैठते हुए देखने के लिए कितने जन्म लेने होंगे?' सचमुच तीसरी से पंद्रहवीं लोकसभा चुनी जाने के बावजूद एक अदद लोकपाल को नहीं चुना जा सका. 1963 से केंद्र में विभिन्न दलों के योग्य, ईमानदार, निष्ठावान नेता सत्ता के सिंहासन पर बैठे. सत्ता या प्रतिपक्ष में भ्रष्टाचार पर अंकुश के लिए प्रतिबद्धता और संकल्पों पर भी संदेह की उंगली नहीं उठाई जा सकती. हां, यह लोकतांत्रिक अधिकारों की लड़ाई है. नरेंद्र मोदी, मनमोहन सिंह, शरद यादव, नीतीश कुमार, सीताराम येचुरी, अरविंद केजरीवाल जैसे किसी नेता पर व्यक्तिगत भ्रष्टाचार का आरोप भी नहीं लगाया जा सकता है. यही नहीं मुलायम सिंह यादव, मायावती या ममता बनर्जी भी लोकपाल-लोकायुक्त के मुद्दों पर असहमति व्यक्त नहीं करते. फिर भी नियुक्ति की प्रक्रिया में देरी से भोली-भाली जनता के बीच नेताओं की मंशा पर संदेह होना स्वाभाविक है.

> प्रशांत भूषण अपनी ही बनाई आम आदमी पार्टी के निष्कासित सहयोगी योगेंद्र यादव के साथ दिल्ली राज्य में उपयुक्त लोकपाल बनाए जाने के लिए फिर सड़क पर आंदोलन कर रहे हैं.

अकेले लोकपाल की बात नहीं है. सत्ता व्यवस्था की पारदर्शिता और निष्पक्षता के संपूर्ण तंत्र में जाने-अनजाने कारणों से सुराख बने दिख रहे हैं. 2005 में केंद्रीय सूचना आयोग का गठन हुआ. एक स्वस्थ बना. काम भी शुरू हुआ. बड़े पैमाने पर उसके सुपरिणाम भी दिखने लगे. लेकिन पिछले दो वर्षों में सूचना के अधिकार और सूचना आयुक्तों पर नई तरह की बेड़ियां दिखने लगी हैं. मुख्य सूचना आयुक्त का चयन खटाई में पड़ा रहा. सूचना अधिकार मिलने में विलंब के सैकड़ों आवेदन केंद्रीय सूचना आयोग के कार्यालय में सुनवाई बिना पड़े हुए हैं. कुछ सूचना आयुक्तों के पद ही खाली पड़े हैं तो सुनवाई ही कैसे होगी? अरविंद केजरीवाल तो सूचना के अधिकार आंदोलन के सिपाही थे. मुख्यमंत्री बनने के बाद अपनी सरकार की सफलता के झूठे दावों के अंबार लगा रहे हैं लेकिन असली सूचना तंत्र पर पहरे लगा रहे हैं. बहुमत के बल पर ऐसा 'जनलोकपाल' विधेयक लाए हैं, जिसे दिल्ली के उपराज्यपाल और केंद्र सरकार की स्वीकृति ही नहीं मिल पाएगी. मतलब, केवल अहंकार और पाखंड की राजनीति विभिन्न स्तरों पर जारी है. लोकायुक्त की चर्चा होने पर प्रतिपक्ष के मित्र तत्काल गुजरात की याद दिलाते हैं. पहले नाम तय होने में कुछ वर्ष लग सकते हैं और काम होने में तो समय लगता है. हर सत्ताधारी अपनी सरकार की सूचनाओं और गड़बड़ियों पर पर्दा चाहता है. 'पर्दा उठाओ, पर्दा गिराओ' का खेल जनता के भविष्य के साथ अवश्य खिलवाड़ है. ऐसी स्थिति में ईमानदार सूचना आयुक्तों, लोकपाल-लोकायुक्तों की नाव कब किनारे लग पाएगी? ■■

धरती को बचाने की जिम्मेदारी हम सबकी

अवधेश कुमार
जाने-माने पत्रकार

हम जिसे आम बोलचाल में ग्लोबल वार्मिंग कहते हैं यानी जलवायु का तापमान बढ़ जाना वह एक प्रकार से हमारी धरती को लगा हुआ बुखार है जिससे उसके आसपास का पूरा वायुमंडल बुखार से तड़पने की अवस्था में जा रहा है. कल्पना करिए यदि हमारे शरीर का तापमान सामान्य से थोड़ा भी ज्यादा बढ़ जाए तो हम कैसी स्थिति में आ जाते हैं. ठीक यही स्थिति हमारी धरती और उसके आसपास के वातावरण की है. इस बात पर दुनिया की सहमति है कि ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन इस समय जिस रफ्तार से बढ़ रहा है वही जारी रहा तो हम उस सीमा को पार कर जाएंगे जहां से धरती और आसपास की गर्मी पर हमारे लिए काबू पाना कठिन होगा और यह भयावह रूप धारण कर लेगा.

इसी पर विचार कर रास्ता निकालने के लिए पेरिस में जलवायु शिखर सम्मेलन हो रहा है. लेकिन कोई भी रास्ता तो तभी निकलेगा जब हम एकदम नंगे यथार्थ को स्वीकार करें. अभी अमेरिका के विदेश मंत्री ने कहा है कि पेरिस जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में भारत का रुख बड़ी चुनौती होगा. यानी भारत को कार्बन उत्सर्जन कटौती के लिए मनाना आसान नहीं होगा. भारत की ओर से हालांकि इसका जवाब दे दिया गया है. पर्यावरण मंत्री प्रकाश जावड़ेकर ने कहा कि भारत ने स्वच्छ पर्यावरण, स्वच्छ ऊर्जा, साफ पानी के अलावा अधिक हरियाली की दिशा में सकारात्मक कदम उठाए हैं. भारत विरोध नहीं करेगा, लेकिन संतुलित विकास और पर्यावरण को लेकर बदलाव की जरूरतों पर जोर देगा. वास्तव में सबसे पहले तो यह देखना होगा कि आखिर धरती के बुखार के मुख्य खलनायक क्या भारत एवं चीन ही हैं जैसा सामान्य तौर पर पश्चिमी देश मान लेते हैं?

पहले कुछ तथ्य. आंकड़ों के अनुसार देखें तो चीन विश्व के कुल ग्रीन हाउस उत्सर्जन में अकेले सबसे ज्यादा 25.26 प्रतिशत का अंशदान दे रहा है. उसके बाद अमेरिका है जिसका अंशदान 14.4 प्रतिशत है. फिर यूरोपीय संघ आता है जो 10.16 का अंशदान दे रहा है. भारत का अंशदान 6.96 प्रतिशत है. अगर प्रतिशत के अनुसार देखा जाए तो यह कम नहीं है, किंतु भारत का स्थान अमेरिका और चीन के बाद काफी कम है. एक दूसरा नजरिया जनसंख्या के आधार पर देखने का भी है. जनसंख्या के अनुसार भारत का योगदान केवल 2.44 प्रतिशत है. विश्व में जनसंख्या के आधार पर ग्रीनहाउस या कार्बन उत्सर्जन देशों में भारत का स्थान 120 वां है. इस आधार पर अमेरिका का योगदान सबसे अधिक 19.86 प्रतिशत है. इसके बाद रूस का 16.22 प्रतिशत, जापान का 10.54 प्रतिशत तथा ईरान का 9.36 प्रतिशत है. जनसंख्या के आधार पर चीन का अंशदान घटकर 8.13 प्रतिशत हो जाता है. इसमें केवल एक आधार पर विचार करने से संतुलित निष्कर्ष नहीं आ सकता. इसलिए विचार करने के लिए दोनों आधारों को लेना होगा फिर उनके बीच संतुलन बनाना होगा.

PARIS2015 UN CLIMATE CHANGE CONFERENCE COP21·CMP11

> इसमें हर स्तर का योगदान चाहिए. निजी कारोबारी भी आगे आएं इसके लिए उनको प्रेरित किया जाए या जरूरत पड़े तो दबाव में भी लाया जाए.

इसमें हर स्तर का योगदान चाहिए. निजी कारोबारी भी आगे आएं इसके लिए उनको प्रेरित किया जाए या जरूरत पड़े तो दबाव में भी लाया जाए. वैश्विक वित्तीय संस्थाएं भी भूमिका निभाएं, लेकिन इसमें भी विकसित एवं संपन्न देशों की ही मुख्य भूमिका हो सकती है.

आखिर बड़े कारोबारी भी तो उनके देश में ही ज्यादा हैं. वैश्विक वित्तीय संस्थाओं में निर्णय भी उनकी ही भूमिका से हो पाता है. हालांकि यह सच है कि जिस भयावह अवस्था में तापमान पहुंच गया है और यह बढ़ता जा रहा है उसमें हम सब बिना थोड़ा-थोड़ा योगदान दिए धरती को और स्वयं को बचा नहीं सकते. जन चेतना जगाने एवं एक-एक व्यक्ति को अपने स्तर पर योगदान निर्धारण करने का अभियान भी चलाना होगा. ■■

जन-लोकपाल की भ्रूण-हत्या क्यों?

वेदप्रताप वैदिक
वरिष्ठ पत्रकार

दिल्ली की स्थानीय सरकार द्वारा प्रस्तावित जन-लोकपाल बिल का अन्ना हजारे ने समर्थन कर दिया है. उन्होंने कुछ सुझाव भी दिए हैं लेकिन उनका यह समर्थन बड़े मौके पर आया है और इससे आम आदमी पार्टी का आत्मबल निश्चय ही बढ़ा है. प्रशांत भूषण, योगेंद्र यादव और डॉ. आनंद कुमार के विरोध की टक्कर में अन्ना का समर्थन काफी महत्वपूर्ण है लेकिन मूल प्रश्न यह है कि क्या अन्ना हजारे को इतनी समझ है कि वे लोकपाल और जोकपाल में फर्क कर सकें? वे एक सीधे-साधे कार्यकर्ता हैं. समाजसेवी हैं. भले आदमी हैं. उन्हें कानून की बारीकियों का क्या पता? उनके मुकाबले जो बात प्रशांत वगैरह कह रहे हैं, वह ज्यादा ध्यान देने लायक है.

> सबसे आपत्तिजनक बात तो यह है कि यह लोकपाल केंद्र के कर्मचारियों और नेताओं को भी अपनी जद में ले रहा है.

दिल्ली के वर्तमान जन-लोकपाल की नियुक्ति और मुक्ति, दोनों के प्रावधान ऐसे रखे गए हैं, जिसके कारण ताले की चाबी मुख्यमंत्री की जेब में पड़ी रहेगी. मुख्यमंत्री, विपक्षी नेता, विधानसभा अध्यक्ष और दिल्ली के मुख्य न्यायाधीश लोकपाल की नियुक्ति करेंगे. चार लोगों के इस चयन-मंडल में बहुमत किसका होगा? नेताओं का, जो सबसे अधिक भ्रष्ट हैं. इसी तरह लोकपाल को मुक्त करने के लिए विधानसभा के 2/3 बहुमत को ही काफी मान लेना गलत है. इसका अर्थ यह हुआ कि दिल्ली का लोकपाल, लोकपाल नहीं, अरविंद पाल होगा. अब से लगभग चार साल पहले जब अरविंद ने मुझे लोकपाल का मूल मसविदा दिखाया था, तब भी मैंने उसी वक्त कई संशोधन सुझा दिए थे. अरविंद ने दूसरे ही दिन मुझे संशोधित मसविदा भेज दिया. अरविंद से मैं आशा करता हूं कि वह लोकपाल की नियुक्ति और मुक्ति, दोनों के लिए नेताओं और विधानसभा को एकाधिकार नहीं देंगे. मुख्यमंत्री बनने के बावजूद मैं उनमें एक आंदोलनकारी का खुलापन, लचीलापन देखना चाहता हूं.

सबसे आपत्तिजनक बात तो यह है कि यह लोकपाल केंद्र के कर्मचारियों और नेताओं को भी अपनी जद में ले रहा है. यह प्रावधान डालकर अरविंद इस बिल की भ्रूण-हत्या ही कर रहे हैं. यदि केंद्र में 'आप' की सरकार हो तो भी वह इस बिल को पास नहीं होने देगी. दिल्ली प्रदेश की विधानसभा, नाममात्र की विधानसभा है और मुख्यमंत्री नाममात्र का मुख्यमंत्री होता है. दिल्ली केंद्र प्रशासित क्षेत्र है. अरविंद की हर चाल इस सीमा को लांघने की कोशिश करती है. यदि वे अपनी सीमा में रहें तो भी चमत्कार कर दिखाने की अपार संभावनाएं हैं. वे यदि दिल्ली के किसी एक मोहल्ले को भी भ्रष्टाचार-मुक्त कर सकें तो सारा देश उन्हें अपने कंधे पर बिठा लेगा. मोह-भंग को प्राप्त यह देश नौटंकियों से ऊब रहा है. आशा है, अब बेचारे अन्ना को नई नौटंकी में नहीं फंसाया जाएगा. ■■

नजर के पार

भारत को सक्षम नेताओं की जरूरत

फोरम कामदार
विधि विशेषज्ञ

एक समय था जब भारत में करिश्माई नेताओं, क्रांतिकारियों और विचारकों की बड़ी संख्या थी, लेकिन आज दुर्भाग्य से नेतृत्व की कमी के कारण भारत के विकास की गति सुस्त हो गई है. आज नेतृत्व करने वाला वर्ग जनता की गाढ़ी कमाई हजम करने और अपना घर भरने के बारे में ही सोचता है.

पिछले दशक के सबसे बड़े चुनावों में से एक में बिहारियों ने सबसे महत्वपूर्ण बाहरी को खारिज कर दिया. महागठबंधन ने चुनाव जीता, क्योंकि उसने मुख्यमंत्री पद का उम्मीदवार पहले ही घोषित कर दिया था और उसकी रणनीति उस उम्मीदवार को चुनाव के केंद्र में रखने की थी. इसके विपरीत भाजपा में स्थानीय नेताओं की कमी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी. प्रधानमंत्री राज्यस्तर के चुनावों में सभी जगह चुनाव प्रचार नहीं कर सकते. भाजपा के लिए दिल्ली विधानसभा और बिहार के चुनावों में हार का एक बड़ा कारण नेतृत्व को ऊपर से नीचे की ओर थोपने की शैली रही. एक मजबूत स्थानीय संबंध ही वह चीज है जो महागठबंधन को उनसे अलग करती है. भाजपा की इस विफलता का एक बड़ा कारण स्थानीय नेताओं को तैयार करने के लिए पार्टी की आंतरिक संरचना का अभाव था, जो राज्य के चुनाव के लिए पार्टी का चेहरा बन सकता. देश की दूसरी सबसे बड़ी पार्टी कांग्रेस ने बिहार चुनावों में शालीनता से अच्छा प्रदर्शन किया, लेकिन यह उनके लिए चिंता का विषय है कि उन्हें नीतीश कुमार की छाया के नीचे आने के लिए मजबूर किया गया. 2014 के चुनाव में मटियामेट करने वाली पराजय के बाद कांग्रेस मुश्किल से ही दुबारा अपने पैरों पर खड़ी होने में सक्षम है. उन्हें सही सबक सीखने की जरूरत है और समय उनके पक्ष में नहीं है. कांग्रेस ने आजादी के बाद से अधिकतर समय तक देश में राज किया और अपनी नेतृत्व शैली से वह पूरी तरह संतुष्ट है. भारत की राजनीति की हर ऊंचाई पर नेतृत्व का स्पष्ट अभाव है. आज एक चेहरा पूरी पार्टी के लिए नियम तय करता है और उसी के इशारे पर चुनाव लड़ा जाता है. भारत को आज हर मोर्चे पर ऐसे नेता की जरूरत है जो न सिर्फ सक्षम हो बल्कि अपने दृष्टिकोण में सर्वसमावेशी हो और विरोधी विचारों के प्रति सहिष्णु भी हो. विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच लोकतंत्र की वास्तविक प्रक्रिया को लागू किए जाने की सख्त जरूरत है.

भारत को आज ऐसे दूरदर्शी नेताओं की सख्त जरूरत है जो न सिर्फ उम्मीद प्रदान करें बल्कि उन उम्मीदों और सपनों को जमीन पर भी उतारें. आज, हमारे तथाकथित 'नेता' एक के बाद दूसरा चुनाव जीतने की रणनीति बनाने में व्यस्त हैं और उधर कमजोर वर्गों की हालत बद से बदतर होती जा रही है. अब समय आ गया है कि भारत अपने इरादों को अमल में लाए. इस देश ने महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और वल्लभभाई पटेल जैसे महान नेताओं को पैदा किया है. दुनिया इन दूरदर्शियों के बताए रास्ते की ओर देख रही है और हम उनकी अपनी संतानें उनकी शिक्षाओं को आत्मसात करने में असमर्थ हैं.

चुनाव के समय उम्मीदवारों का चयन करने के लिए मापदंड को परिभाषित किए जाने की आवश्यकता है, चाहे वह किसी पार्टी का हो या निर्दलीय उम्मीदवार. इस देश के नागरिकों को बेहतर विकल्पों को पाने का हक है ताकि वे बेहतर नेतृत्व चुन सकें. हमने 2014 के लोकसभा चुनाव, 2015 के दिल्ली विधानसभा चुनाव और हालिया बिहार चुनाव में देखा है कि लोगों ने उपलब्ध विकल्पों में से सबसे बेहतर को चुना है.

ऐसी निर्वाचन प्रक्रिया के बारे में कहा जा सकता है- 'योग्यता अच्छे नेताओं की गारंटी नहीं है.' लेकिन इसका जवाब है- 'कम से कम यह वर्तमान प्रक्रिया से एक कदम आगे है.' ■■

तोल बोल

मैं देश को विश्वास दिलाना चाहता हूं कि जो सामाजिक और धार्मिक समरसता बिगाड़ने की कोशिश करेगा, उसकी खैर नहीं है.

■ राजनाथ सिंह, केंद्रीय गृह मंत्री

मोदी सरकार को यह जान लेना चाहिए कि आप 'हेट इन इंडिया' चलाकर विदेश में 'मेक इन इंडिया' की विचारधारा को प्रोत्साहित नहीं कर सकते.

■ शशि थरूर, कांग्रेस नेता

gÑWmnHš gmXHš : ñd. Odñhabrb XSñ
M`a_Z, E[SQñ{a`b ~ñS : {dO~ XSñ
E[SQña-BZ-Mr\š : aïOÐ XSñ
gmXH : {dHñg {_ I ★
★ nr. Aña. ~r. HbZZ Hš AZgna gnU gmXHš` X{`Ed Hš {bE {Oä_Xña.

© लोकमत समाचार _ àHñ{eV g^r gr_Jr Hñ gdñ{YHña brHñ_V r{S`ñ àn`dÒ {b. Hš nng ga{j V h. brHñ_V _r{S`ñ àn`dÒ {b. Hš {bE _ÐHš Ed àHñeHš बालाजी मुले Ûñaä brHñ_V ~r{S`ñ àn.Ò {b., ñbrÒ Hš. 192, 207, 208 E_. Aä8. Sr. gr. B\S{ffÒ`b E[a`ñ, ~Ò{r~ñar, ZzJna _ {ÐV Ed brHñ_V ^dZ n. Odñhabrb Zñèš _ñJ, ZzJna _ àHñ{eV.
P.O.BOX NO. 230 R.N.I. No. 47101/89
Xa\Ud{Z : 0712-2423527 (7 brB{g) \ŠSg : 6618555
Email : gmXHš` : lsedit.ngp@lokmat.com
{dkmZ : advt.ngp@lokmat.com {dVaU : circ.ngp@lokmat.com

इतिहास पर नजर 3 दिसंबर

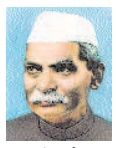

स्वतंत्र भारत के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद का जन्म 1884 में आज ही के दिन हुआ था. उन्होंने स्कूल के दिनों से ही अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया था और आगे चल कर हर मोर्चे पर उसे सच साबित किया. उनकी पढ़ाई के दिनों के दर्जनों किस्से आज भी भारत में विद्यार्थियों को प्रेरणा देने के लिए सुने सुनाए जाते हैं. आजादी की लड़ाई के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल होने से पहले वह वकील थे. महात्मा गांधी के प्रबल समर्थक राजेंद्र बाबू बहुत जल्दी ही बिहार के बड़े नेताओं में शामिल हो गए. 1934 में वे कांग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष भी चुने गए. 1950 में जब देश गणतंत्र बना तो उन्हें देश का पहला राष्ट्रपति चुना गया. 1957 में उन्हें दोबारा इस पद के लिए चुना गया. पूरे देश में अत्यन्त लोकप्रिय होने के कारण उन्हें राजेंद्र बाबू या देशरत्न कहकर पुकारा जाता था. ■■

- 1882-प्रसिद्ध कलाकार नंदलाल बोस का जन्म.
- 1889-क्रांतिकारी खुदीराम बोस का जन्म.
- 1912-तुर्की, बुल्गारिया, सर्बिया, यूनान और मोंटेगरो ने युद्धविराम समझौता किया.
- 1967-इंडोनेशिया के पूर्व राष्ट्रपति सुकर्णो नजरबंद किए गए.
- 1979-हॉकी के जादूगर ध्यानचंद का निधन.
- 1984-भोपाल स्थित यूनियन कार्बाइड फैक्ट्री से विषैली गैस लीक होने से कम से कम 3000 लोग मारे गए.

पाठकों के पत्र

आतंकवाद का खतरा

क्रूर आतंकी संगठन आईएसआईएस अपने पैर लगातार फैला रहा है. भारत में खून-खराबा करने पर वह उतारू हो गया है. उसके नापाक इरादों से हमें सतर्क रहना पड़ेगा. भारत पिछले तीन दशकों से आतंकवाद की त्रासदी को झेल रहा है. कश्मीर में जनता के मजबूत इरादों के चलते पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद दम तोड़ रहा है. पाकिस्तान वहां फिर भी अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है. पंजाब में आतंकवाद को फिर से जिंदा करने की साजिश चल रही है. इन खतरों के बीच आईएसआईएस एक नया खतरा बनकर भारत के सामने आ खड़ा हुआ है. उसके इरादे भारत में कभी सफल नहीं होंगे क्योंकि हम भारतवासी भाईचारे में विश्वास करते हैं. फिर भी आईएसआईएस बेहद खतरनाक संगठन है और उससे सरकार तथा जनता को सतर्क रहने की जरूरत है.

■ दीपक बाजारगांवकर, काटोल

बुढ़िया की शर्त!

शहर के सबसे बड़े बैंक में एक बार एक बुढ़िया आई. उसने मैनेजर से कहा, 'मुझे इस बैंक में दस लाख रुपए जमा करने हैं.'

मैनेजर बोला, 'वाह क्या बात है, आपके पास तो काफी पैसा है, आप करती क्या हैं?'

वृद्धा बोली, 'कुछ खास नहीं, बस शर्तें लगाती हूं.'

मैनेजर ने कहा, 'कमाल है!' वृद्धा बोली, 'कमाल कुछ नहीं है बेटा, मैं अभी एक लाख रुपए की शर्त लगा सकती हूं कि तुमने अपने सिर पर विग लगा रखा है.

हास्य

मैनेजर हंसते हुए बोला, 'नहीं, मैं विग नहीं लगाता.'

वृद्धा : 'तो शर्त क्यों नहीं लगाते?'

मैनेजर तैयार हो गया. अगली सुबह दस बजे वह बुढ़िया अपने वकील के साथ मैनेजर के केबिन में पहुंची और पूछा, 'क्या आप तैयार हैं?'

मैनेजर : 'बिल्कुल, क्यों नहीं?'

वृद्धा : 'लेकिन चूंकि वकील साहब भी यहां मौजूद हैं और बात एक लाख की है इसलिए मैं तसल्ली करना चाहती हूं कि सचमुच आप विग नहीं लगाते.'

मैनेजर ने पल भर सोचा और हां कर दी, आखिर मामला एक लाख का था.

वृद्धा मैनेजर के नजदीक आई और धीर-धीरे आराम से मैनेजर के बाल नोंचने लगी. उसी वक्त अचानक पता नहीं क्या हुआ, वकील साहब अपना माथा दीवार पर ठोंकने लगे.

मैनेजर : 'अरे.. अरे.. वकील साहब को क्या हुआ?'

वृद्धा : 'कुछ नहीं, इन्हें सदमा लगा है, मैंने इनसे पांच लाख की शर्त लगाई थी कि आज सुबह दस बजे मैं शहर के सबसे बड़े बैंक के मैनेजर के बाल नोंचकर दिखा दूंगी. ■■